महर्षि वाल्मीकि के अनुसार भरत का व्यक्तित्व

ममता रानी
शोधार्थी
महर्षि दयानन्द विश्वविद्याल, रोहतक
ई-मेल- 4mamtagahlawat@gmail.com

शोध सार

संसार के इतिहास में महर्षि वाल्मीकि रामायण सबसे प्राचीन ऐतिहासिक ग्रंथ है। इस ग्रंथ में मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम सहित भरत जी के पावन जीवन का भी चरित्र चित्रण है। राम के अनुज भरत जी ने भी भ्रातृत्व या भ्रातृ–प्रेम की ऐसी मर्यादा स्थापित की है कि उसके बाद संसार में अन्य कोई उसका पालन न कर सका। यद्यपि महाभरत में युधिष्ठिर के चारों भाइयों ने अपने बड़े भाई के लिए कष्ट सहन किए हैं जो कि आदर्श हैं, परंतु भरत का आइर्श देश काल व परिस्थितियों से भिन्न होने के कारण कुछ अलग व महत्वपूर्ण है। यद्यपि वाल्मीकि रामायण में भरत का अधिक उल्लेख नहीं किया फिर भी तथापि अपने उच्च चारित्र्य के कारण भरत ने अन्य पात्रों से अग्रस्थान प्राप्त कर लिया है।

वाल्मीकि के अनुसार भरत के चरित्र का संबंध प्रायः अयोध्याकांड से ही है। अन्य कांडों में कहीं–कहीं भरत का उल्लेख है, परंतु उसमें उनका चारित्र्य को नहीं दर्शाया गया है। राम को सात कांडों में जो यश प्राप्त हुआ है, वह भरत को इतने से चरित्र से प्राप्त हुआ है। भरत ने किसी से कोई युद्ध नहीं किया या पराक्रम नहीं दिखाया। फिर भी उसका आदर्श चरित्र प्रस्तुत हुआ है।

भरत के चरित्र के दो स्थायी भाव हैं चारित्र्य निष्ठा और कुलाभीमान। राम से अत्यधिक प्रेम का उद्‌गम भरत के चरित्र की निष्ठा में ही है।

जिस भरत को राज्य दिलाने के लिए कैकेयी ने राम को वनवास दिलाया। राम के वनवास शौक में दशरथ की मृत्यु हो जाने पर, इन सब व्रत्तांतों को गुप्त रखकर भरत को मातुलगृह से बुलाया। भरत के अयोध्या पहुंचने पर जब पिता के देहांत व राम के वनवास को सुनकर राज सिंहासन पर बैठने की अनुमति दी तो वह भरत राज्य प्राप्ति में प्रसन्न नहीं होते हुए, किंतु रोते हुए अचेत होकर भूमि पर गिर पड़ते हैं। महर्षि वाल्मीकि ने लिखा है–

अभिषेकयति समं तु राजा यज्ञं न यक्ष्यते। इत्यहं कृतसंकल्पों दृष्टों यात्रामयासिषम।।[1]

अर्थात् मेरा पिता राजा के दशरथ राम का राज्याभिषेक करने हेतु राजसूय यज्ञ करेगा यह संकल्प मन में रखकर, प्रसन्न होकर चला था। हाय! यह क्या हो गया। यह है भरत के सौजन्य का प्रथम दृश्य। राज्यश्री को प्राप्त करने के लिए लोग भाई का वध तक कर देते हैं, परंतु निरपराध भरत ऐसे राज्य प्राप्ति में प्रसन्नता के स्थान पर विलाप करता है, अपनी माता कैकेयी को धिक्कारते हुए कहता है कि–

हे माता! तूने दुःख में दुःख दिया, घाव पर नमक छिड़का, पिता को मृत्यु के मुख में

पहुंचाया और राम को वनवासी बनाया। बस कुल के अनुसार तू कालरात्रि बनी।[2]

दोष रहित होते हुए भी भरत कहता है कि जो यह महापाप तूने किया है उसका प्रायश्चित मैं स्वयं करूंगा। मैं ऐसा कुछ करूंगा जिससे कुल में वृद्धि होगी। मैं सर्वगुण संपन्न भाई को पुनः राजसिंहासन पर बिठाऊँगा तथा स्वयं वनवासी होऊँगा। इसके सिवा पापमुक्त होने का दूसरा रास्ता नहीं है–

अहें त्वपचितिं भ्रातुः पितुश्च सकालामिमाम्।
वर्धनं यशश्चापि करिगयाँमि न सशत्रः।।[3]

यह है भरत का द्वितीय सौजन्य, जिससे भरत के द्वारा माता की भर्त्सना व पाप प्रश्रालय के लिए किया गया प्रायश्चित उसके कुलाभीमान व सुशीलता का परिचय देता है।

भरत के निष्पाप होने पर भी इतने दुःखों व कष्टों का सामना करना पड़ता है, यहां तक कि कौशल्या भी भरत को दृष्टिपथ में आते ही उसे राज्य लोभी, अन्य प्रकार के उपालंभ देती हुई कहती है कि–

इदं ते राज्यकामस्य राज्यं प्राप्तमकण्टकम्।
सम्प्राप्तं वत कैकेय्या शीघ्रकूरेण कर्मणा।।[4]

कौशल्या ने भरत के हृदय पर आघात–पर–आघात किए तब भरत बहुत व्यथित हुआ मानो, उसके जखम पर तीक्ष्ण सुई से आघात किए गए हों।

कौशल्या के समान ही राजा गुह तथा भारद्वाज ने भी भरत के चरित्र पर शंका प्रदर्शित कर कठोर वचन कहे हैं। निषादराज गुह कहता है कि–

कच्चिन्न दुष्टो व्रजसि रामस्यास्लिष्टकर्मणः।
इयं ते महती सेना शंका जनयतीवमे।।[5]

अर्थात् राम को वापिस लाने में तेरा कोई दुष्ट भाव तो नहीं क्योंकि इतनी बड़ी सेना लेकर साथ में जा रहा है, इसलिए शंका हो रही है।

फिर भी चित्रकूट तक की यात्रा के लिए मार्गदर्शक के रुप में निषादराज को चुना, गुरु वशिष्ठ के होते हुए भी, इससे पता चलता है कि भरत में इतनी अधिक विनम्रता है। इसी प्रकार भारद्वाज ऋषि ने कहा तूं तो राज्य का अधिकारी बन गया है न। फिर इस वन में क्यों आया है? क्योंकि मेरा, मन तेरी ओर से शुद्ध नहीं है मुझे तुझ पर विश्वास नहीं है।

किमिहागमने कार्यं तव राज्यं प्रशासतः।
एतदाचक्ष्व सर्वं मे न हि मे शुध्यतेमनः।।[6]

इससे भरत को ग्लानि, शौक तथा संताप में वृद्धि होना स्वाभाविक था। महर्षि भारद्वाज जैसे तपस्वी के मन में यह शंका हो सकती है तो सामान्य जनों के मन में कितने संशय किये जाते होंगे, यह कल्पना करना कठिन है। क्योंकि एक के बाद एक कौशल्या, गुह तथा भरद्वाज द्वारा उस पर शंकाय की गई।

यह प्रसंग अत्यंत स्वाभाविक एवं माननीय बन पाया है। इससे भरत का चरित्र और भी अधिक ऊंचा उठता है।

जब राम वन गमन के लिए निकलते हैं तो प्रजा शोक से व्याकुल होकर शोर करने लगती है कि अब हमारी रक्षा कौन करेगा। तब राम कहते हैं–

सहि कल्याणचरित्रः कैकेय्यानन्दवद्धेनः।
सहि राजगुणैयुक्तो युवराजःसमीश्रीत करिष्यति
यथावद् वः प्रियाणि च हितानिच।।[7]

कैकेयी पुत्र भरत का चरित्र अत्यंत श्रेष्ठ और सबका कल्याण करने वाला है। वह आयु में छोटा होने पर भी ज्ञान में बड़ा है। प्रकरण से युक्त होने पर भी स्वभाव का बड़ा कोमल है। राजा के लिए सारे आवश्यक गुण मेरे भाई भरत में विद्यमान हैं।

भरत का राम के प्रति अत्यंतिक प्रेम का वर्णन स्थान स्थान पर आया है, जब भरत के चित्रकूट पहुँचने से पहले मार्ग में निषादराज

द्वारा राम की पहली तृणशय्या को देखते सारा शोक उमड़ आया तथा भरत अत्यंत आत्मग्लानि से युक्त होता है और कहता है कि–

हा हतो स्मि नशंसोऽस्मि वत्सभार्यः कृते मम।
ईदृशीं राघवः शय्यामाधिशेते ह्यनाथवत्।।[9]

वाल्मीकि यथार्थ राजनीति के धरातल पर भी भरत का राम के प्रति अनुराग व्यक्त करते हैं। दशरथ की अत्यंतेष्टि के बाद वशिष्ठ तथा अन्य सभासदों ने भरत को राज्य स्वीकार करने के लिए कहा।[9] परंतु भरत ने कहा मैं और यह राज्य दोनों राम के ही हैं, राम सब प्रकार से मुझसे बड़े हैं[10] इसलिए–

राममेवानुगच्छामि सा राजा द्विपदा वरः।
त्रयाणामपि लोकानां राघवो राज्यमहेति।।[11]

राम अयोध्या तो क्या तीनों लोकों में राजा होने के योग्य हैं, मैं उन्हीं का अनुसरण करूंगा। आप सभी श्रेष्ठ पुरुषों के सामने ही इसे बलपूर्वक लोटाने के लिए सब प्रकार से उपाय करूंगा।

इस प्रकार कर्तव्य परायण भरत का भ्रातृपक्ष तथा स्नेहभाव तथा दास्यभाव विशेष है। इसके पश्चात भरत जब राम की खोज कर उनके सेवा में पहुंच अयोध्या लौटने का बहुत आग्रह किया।

भरत के इस दृढ़ संकल्प के सामने राम को झुकना पड़ा। भरत की प्रशंसा करते हुए वर्तमान स्थिति को संभालने के लिए किंचित कर्तव्य जनित संशोधन के साथ स्वीकृति देनी पड़ी।[12] अनुरोध किया राज्य संभाले। भरत अपने आपको राज्यभार वहन करने में असमर्थ बतलाता है। तब राम उसकी प्रशंसा करते हैं और कहते हैं अमात्य सुहृय तथा मंत्रीगणों की मंत्रणाएँ साथ हैं ही।[13] भरत में राज्याधिकार के प्रतीक के रूप में राम पाद स्पर्श से युक्त स्वर्णपादुका ग्रहण कर सकरूण हो कहा–

चतुर्दश ही वर्षाणि जटाचीरधरोहाहा।
फलमूलाशनों वीर भवेयं रघुनन्नं।।[14]

तब भरत विवश होकर राज्यलक्ष्मी का उपभोग न करता हुआ, कंदमूल फल खाकर राम की पादुकाएँ प्रतिनिधि रूप में लेकर स्वयं वानप्रस्थी का रूप धारण कर नंदीग्राम नाम के आश्रम में राम के लौटने की प्रतीक्षा करता हुआ 14 वर्ष बताता है और कहता है कि 15 वर्ष के पहले दिन यदि आपने दर्शन नहीं दिए तो मैं जलती अग्नि में प्रवेश कर जाऊंगा।

राम के आगमन की प्रतीक्षा में भरत की क्या दशा थी। जब लंका विजय कर श्रीराम ने भरत का हाल जानने के लिए भेजा था। इसका वर्णन करते हुए वाल्मीकि जी युद्धकांड में कहते हैं कि–

कोशमात्रे त्वयोध्यायाच्क्षीरकृष्णाजिनाम्बरम्।
ददर्श भरतं दीनं कृशमाश्रमवासिनम।
जटिलं मलदिग्धाङ्ग भ्रातृत्यसनकर्शितेम्।।[15]

अयोध्या नगरी से कोश भर की दूरी पर वल्कन और मृणाजिन धारण किए हुए दुखी, कृश, धूलधूसरित, श्रंगारहीन, भ्रातृशोक में व्याकुल, फूलमूलाहारी, दयनीय, तपस्वी, धर्मचारी, खुले केस वाले वृक्षछाल और अर्जुन पर बैठे हुए, नियतेन्द्रिय, भावुक, ब्रह्मर्षि सदृश भरत को राम के आदेश से हनुमान ने देखा।[15]

जब लंकाविजय के पश्चात् हनुमान राम के आगमन का कुशल संदेश भरत को देने आता है। इसका वर्णन करते हुए वाल्मीकि जी ने लिखा है कि इस प्रकार राम के आने के संदेश को सुनकर भरत प्रसन्न एवं हर्ष से मोहित हो भूमि पर गिर पड़ा, कुछ देर में संभलकर हनुमान को गले लगाकर, आदर से बोला और प्रीति भरे आंसुओं से उसे सिंचित किया।[16]

यहां तक तो भरत ऊंचे जीवन वाला है। यह उसके निजी वृत्तांतों से स्पष्ट हुआ है। यह

उसके संबंध में साक्षी रूप से राम और दशरथ के वचन भी सुनिये। 'न भ्रतरस्तात भवन्ति भरतोपमाः।'[17] राम सुग्रीव से विभीषण के प्रसंग में कहते हैं कि भरत जैसे भ्राता सभी नहीं होते। कैकेयी को समझाते हुए दशरथ कहते हैं कि–

न कथंचिद ऋते रामाद् भरतो राज्यमावसेता।
रामादपि हि तं मन्ये धर्मतो बलवत्तरम्।।[18]

अर्थात् ऐ कैकेयी! तू जिस भरत के लिए राज्य के निमित्त राम को वनवास दिला रही है वह बिना रामजी किसी प्रकार भी राजसिंहासन पर नहीं बैठ सकता क्योंकि वह राम से भी धर्म में अधिक प्रबल है, ऐसा मैं मानता हूँ। इस प्रकार भरत का जीवन राम से कम आदर्श नहीं था।

भरत के ऐतिहासिक तथ्य को उत्तरकांड में बताया गया है कि भरत के दो पुत्र थे एक 'तक्ष' और दूसरा 'पुष्कल'। तक्ष ने तक्षशिला और पुष्कर ने पुष्कलावत नामक नगर बसाया था।

तक्षं तक्षशिलायां पुष्कलं पुष्कलावते।
गन्धवेदेशे रूचिरे गन्धारनिलये च सः।।[19]

निष्कर्ष

अतः भरत जी का जीवन भी श्रीराम की तरह महान व अनुकरणीय है। भरत का राज्यत्याग राम के राज्यत्याग से अधिक आदर्श है। सर्वत्र भरत की विनयशीलता की झांकियां दिखाई देती हैं। कहीं दीनता है, कहीं मानमर्षता, कहीं भय दर्शन है, कहीं भर्त्सना, कहीं मन को आश्वासन दिया है, तो कहीं मनोराज्य की भूमिका पर पहुंच जाता है, इस प्रकार भरत का रूप अन्यत्र मिलना, असंभव है। भरत जैसा भाइ परिवार में हो तो परिवार बहुत सुखमय बन सके और कभी भी दुःख तथा कलह का स्थान न मिले।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वा० रा० अयो० 72/27
2. दुःखे में दुःखमकरोव्रणे क्षारमिवाददाः।
   राजानं प्रेतभावस्थंकृत्वारामं च तापसम्।।
   वा० रा० अयो० 73/3–4
3. वही, 74/30–34
4. वही, 75/11
5. वही, 84/7
6. वही, 90/10
7. वही, 45/9
8. वही, 88/17–19
9. वही, 82/4
10. ज्येष्ठस्य राजता नित्यमुचिता हि कुलस्यनः।
    वही, 79/7
11. वही, 82/26–18–19
12. अनेन धर्मशीलेनवनात् प्रत्यागतः पुनः।
    भ्रात्ता सह भविष्यामि पृथित्यः पतिरूत्तमः।।
    वही, 111/31
13. अमात्यैश्च सुहृद्भिश्च बुद्धिमद्भिश्च मन्त्रिभिः।
    सर्वकार्याणि समंन्त्र्य महान्त्यापि हि कारय।।
    वही, 112/16–17
14. वही, 112/23–26
15. वा० रा० युकाण्ड 125/27–31
16. वही, 125/40–42
17. वही, 18/15
18. वा० रा० अयो० 12/62
19. वा० रा० उत्तर 101/11